॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

॥ अथर्ववेद संहिता ॥

॥ अथर्ववेद॥

॥ अथ चतुर्दशं काण्डम्॥

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

विषय सूची

सूक्त १ – विवाह- प्रकरण सूक्त..... 4
सूक्त २- विवाह प्रकरण सूक्त..... 30

॥अथर्ववेद – चतुर्दशं काण्डम्॥

सूक्त १ – विवाह- प्रकरण सूक्त

सोम की स्तुति, अश्विनी कुमारों की प्रशंसा, बृहस्पति, इंद्र और सविता देव की प्रशंसा, चंद्र का वर्णन तथा गायों की स्तुति

सत्येनोत्तभिता भूमिः सूर्येणोत्तभिता द्यौः ।
ऋतेनादित्यास्तिष्ठन्ति दिवि सोमो अधि श्रितः ॥१४,१.१॥

सत्य ने पृथ्वी को आकाश में स्थापित किया है। सूर्यदेव द्युलोक को स्तम्भित किये हुए हैं। ऋत से आदित्यगण स्थित हैं और सोम द्युलोक के ऊपर स्थित है ॥१४,१.१॥

सोमेनादित्या बलिनः सोमेन पृथिवी मही ।
अथो नक्षत्राणामेषामुपस्थे सोम आहितः ॥१४,१.२॥

आदित्यादि देव सोम के कारण ही बलशाली हैं। सोम द्वारा ही पृथ्वी महिमामयी हुई है । इन नक्षत्रों के बीच भी सोम को ही स्थापित किया गया है ॥१४,१.२॥

सोमं मन्यते पपिवान् यत्संपिंषन्त्योषधिम् ।

सोमं यं ब्रह्माणो विदुर्न तस्याश्नाति पार्थिवः ॥१४,१.३॥

जिस समय सोमलतादि वनस्पतियों, ओषधियों की पिसाई की जाती है, उस समय सोमपान करने वाले ऐसा समझते हैं कि हमने सोमपान किया है; परन्तु जिस सोम को ब्रह्मनिष्ठ ज्ञानीजन जानते हैं, उसे कोई भी व्यक्ति मुख से पीने की सामर्थ्य नहीं रखता ॥१४,१.३॥

यत्त्वा सोम प्रपिबन्ति तत आ प्यायसे पुनः ।
वायुः सोमस्य रक्षिता समानां मास आकृतिः ॥१४,१.४॥

हे सोमदेव ! जिस समय लोग ओषधिरूप में आपको ग्रहण करते हैं, उसके बाद आप बारम्बार प्रवृद्ध होते हैं। वायुदेव सोम की उसी प्रकार सुरक्षा करते हैं, जिस प्रकार महीने, वर्ष को सुरक्षित करते हैं ॥१४,१.४॥

आछद्विधानैर्गुपितो बार्हतैः सोम रक्षितः ।
ग्राव्णामिच्छृण्वन् तिष्ठसि न ते अश्नाति पार्थिवः ॥१४,१.५॥

हे दिव्यसोम ! आप बृहती विद्या के जानकारों से विदित तथा गुह्य विधियों द्वारा सुरक्षित हैं (संकीर्ण मानस वाले कुपात्र इसे नहीं पा सकते) । आप ग्रावा (सोम निष्पादक

यंत्र या गरिमामय वाणी) की ध्वनि को सुनते हैं।आपको पृथ्वी के प्राणी सेवन करने में सक्षम नहीं हैं ॥१४,१.५॥

चित्तिरा उपबर्हणं चक्षुरा अभ्यञ्जनम् ।
द्यौर्भूमिः कोश आसीद्यदयात्सूर्या पतिम् ॥१४,१.६॥

जिस समय सूर्यपुत्री ने पतिगृह के लिए प्रस्थान किया, उस समय ज्ञान (श्रेष्ठ विचार) ही उसका उपबर्हण (सिरहाना – तकिया था। नेत्र ही श्रेष्ठ अञ्जन थे। द्युलोक और पृथ्वी ही उसके कोषागार थे ॥१४,१.६॥

रैभ्यासीदनुदेयी नाराशंसी न्योचनी ।
सुर्याया भद्रमिद्वासो गाथयति परिष्कृता ॥१४,१.७॥

सूर्या की विदाई के समय नाराशंसी और भी नामक ऋचाएँ (अथवा मनुष्यों की प्रशंसा करने वाली वाणियाँ) उसकी सखीरूपा हुईं । सूर्या का परिधान अतिशोभायमान था, जिसे लेकर दोनों सखियाँ साथ गईं (अर्थात् कल्याणकारी गाथाओं मन्त्रादि से विशेषतः सज्जित होकर सूर्या गईं) ॥१४,१.७॥

स्तोमा आसन् प्रतिधयः कुरीरं छन्द ओपशः ।
सूर्याया अश्विना वराग्निरासीत्पुरोगवः ॥१४,१.८॥

स्तवन (स्तुति मंत्र) ही सूर्या के लिए अन्न था, कुरीर नामक छन्द सिर के आभूषण थे । सूर्या के वर अश्विनी कुमार थे तथा अग्नि अग्रगामी दूतरूप थे ॥१४,१.८॥

सोमो वधूयुरभवदश्विनास्तामुभा वरा ।
सूर्यां यत्पत्ये शंसन्तीं मनसा सवितादददात्॥१४,१.९॥

सूर्या द्वारा हृदय से पति की कामना करने पर जब (सूर्य ने) उन्हें अश्विनीकुमारों को प्रदान किया, तब सोम भी वधूयु (उनके साथ विवाह के इच्छुक) थे; परन्तु अश्विनीकुमार ही उनके वररूप में स्वीकृत किये गये ॥१४,१.९॥

मनो अस्या अन आसीद्द्यौरासीदुत छदिः ।
शुक्रावनड्वाहावास्तां यदयात्सूर्या पतिम् ॥१४,१.१०॥

जिस समय सूर्या अपने पतिगृह में गईं, उस समय मन ही उनका रथ (वाहन) था और आकाश ही रथ के ऊपर की छतरी थी। दो शुक्र (प्रकाशवान् सूर्य-चन्द्र) उनके रथवाहक थे ॥१४,१.१०॥

ऋक्सामाभ्यामभिहितौ गावौ ते सामनावैताम् ।
श्रोत्रे ते चक्रे आस्तां दिवि पन्थाश्चराचरः ॥१४,१.११॥

हे सूर्या देवि ! ऋक् और साम स्तवनों (ज्ञान) को सुनने वाले-धारण करने वाले, एक दूसरे के साथ साम्य रखने वाले दो श्रोत्र आपके मनरूपी रथ के चक्र हुए। रथ के गमन का मार्ग आकाश निश्चित हुआ ॥१४,१.११॥

शुची ते चक्रे यात्या व्यानो अक्ष आहतः ।
अनो मनस्मयं सूर्यारोहत्प्रयती पतिम् ॥१४,१.१२॥

जाने के समय आपके रथ के दोनों पहिये पवित्र अथवा अति उज्ज्वल हुए। उस रथ की धुरी वायुदेव थे। पतिगृह को जाने वाली सूर्या मनरूपी रथ पर आरूढ़ हुईं ॥१४,१.१२॥

सूर्याया वहतुः प्रागात्सविता यमवासृजत्।
मघासु हन्यन्ते गावः फल्गुनीषु व्युह्यते ॥१४,१.१३॥

सूर्या के पतिगृह – गमनकाल में सूर्य ने पुत्री के प्रति स्नेहरूप जो धन स्रवित किया (दिया), उसे पहले ही भेज दिया था। मघा नक्षत्र में विदाई के समय दी गई गौओं को हाँका गया तथा अर्जुनी अर्थात् पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में कन्या को पति के गृह भेजा गया ॥१४,१.१३॥

यदश्विना पृछमानावयातं त्रिचक्रेण वहतुं सूर्यायाः ।
कैकं चक्रं वामासीत्क देष्ट्राय तस्थथुः ॥१४,१.१४॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस समय आप दोनों तीनचक्रों से युक्त रथ से सूर्या (सूर्यपुत्री) को ले जाने के लिए पहुँचे थे, तब आपका एक चक्र कहाँ स्थित था ? आप दोनों अपने-अपने क्रिया – व्यापार में प्रेरणा प्रदान करने वाले कौन से स्थान पर रहते थे ? ॥१४,१.१४॥

यदयातं शुभस्पती वरेयं सूर्यामुप ।
विश्वे देवा अनु तद्वामजानन् पुत्रः पितरमवृणीत पूषा ॥१४,१.१५॥

हे श्रेष्ठ कर्मों के निर्वाहक अश्विदेवो ! जब आप दोनों सूर्य पुत्री को श्रेष्ठ वधू मानकर उनके समीप वरण करने के लिए पहुँचे थे, तब आपके उस कार्य का सभी देवों ने अनुमोदन किया था। पूषादेव ने पुत्र द्वारा पिता को स्वीकार करने के समान आपको धारण किया ॥१४,१.१५॥

द्वे ते चक्रे सूर्ये ब्रह्माण ऋतुथा विदुः ।
अथैकं चक्रं यद्गुहा तदद्धातय इद्विदुः ॥१४,१.१६॥

हे सूर्ये ! ब्राह्मण (ब्रह्मनिष्ठ व्यक्ति) इस बात से परिचित हैं कि आपके रथ के दो (कर्मशील) चक्र ऋतुओं के अनुसार गतिशील होने में प्रसिद्ध हैं। तीसरा (ज्ञान-विज्ञान परक) चक्र जो गोपनीय था, उसे विद्वान् जानते हैं ॥१४,१.१६॥

अर्यमणं यजामहे सुबन्धुं पतिवेदनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनात्प्रेतो मुञ्चामि नामुतः ॥१४,१.१७॥

पति की प्राप्ति कराने वाले तथा श्रेष्ठ बन्धु-बान्धवों से युक्त रखने वाले अर्यमादेव का हम यजन करते हैं। जिस प्रकार ककड़ी या खरबूजा (पकने पर) बेल के बन्धन से (सहज ही) पृथक् होता है, वैसे ही हम पितृकुल सेकन्या को पृथक् करते हैं, परन्तु पतिकुल से उसे पृथक् नहीं करते ॥१४,१.१७॥

प्रेतो मुञ्चामि नामुतः सुबद्धाममुतस्करम् ।
यथेयमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रा सुभगासति ॥१४,१.१८॥

हे कन्ये ! इस पितृकुल से आपको मुक्त करते हैं, लेकिन पतिकुल से नहीं । उस (पतिकुल) से आपको भली प्रकार सम्बद्ध करते हैं । हे कामनावर्षक इन्द्रदेव ! यह वधू सुसन्ततियुक्त और सौभाग्यवती हो ॥१४,१.१८॥

प्र त्वा मुञ्चामि वरुणस्य पाशाद्येन त्वाबध्नात्सविता सुशेवाः ।
ऋतस्य योनौ सुकृतस्य लोके स्योनं ते अस्तु सहसंभलायै
॥१४,१.१९॥

हे कन्ये ! आपको हम वरुण के बन्धनों से छुड़ाते हैं। सवितादेव ने सेवा कार्य के लिए आपको बन्धनयुक्त किया था । सत्य के आधार और सत्कर्मों के निवासरूप लोक में अनिष्टरहित पति के साथआपको विराजमान करते हैं ॥१४,१.१९॥

भगस्त्वेतो नयतु हस्तगृह्याश्विना त्वा प्र वहतां रथेन ।
गृहान् गच्छ गृहपत्नी यथासो वशिनी त्वं विदथमा वदासि
॥१४,१.२०॥

भगदेवे आपको यहाँ से हाथ पकड़कर ले जाएँ। आगे अश्विनीकुमार आपको रथ में विराजित करके ले चलें । आप अपने पतिगृह की ओर प्रस्थान करें । वहाँ आप गृहस्वामिनी और सबको अपने नियंत्रण (अनुशासन) में रखने वाली बनें । वहाँ आप विवेकपूर्ण वाणी का प्रयोग करें ॥१४,१.२०॥

इह प्रियं प्रजायै ते समृध्यतामस्मिन् गृहे गार्हपत्याय जागृहि
।

एना पत्या तन्वं सं स्पृशस्वाथ जिर्विर्विदथमा वदासि ॥१४,१.२१॥

पतिगृह में सुसन्ततियुक्त होकर आपके स्नेह की वृद्धि हो और इस घर में आप गार्हपत्य अग्नि के प्रति जागरूक रहें अर्थात् गृहस्थधर्म के कर्तव्यों के निर्वाह के लिए सदैव जागरूक रहें । स्वामी के साथ आप संयुक्त (एक प्राण, एक मन वाली) होकर रहें। वृद्धावस्था में आप दोनों (दम्पती) श्रेष्ठ उपदेश (अपनी सन्तानों के लिए करें ॥१४,१.२१॥

इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम् ।
क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वस्तकौ ॥१४,१.२२॥

हे वर और वधु ! आप दोनों यहीं रहें । कभी भी परस्पर पृथक् न हों । सम्पूर्ण आयु का विशेष रीति से उपभोग करें। अपने गृहस्थ धर्म का निर्वाह करते हुए पुत्र-पौत्रादि सन्तानों के साथ आमोद-प्रमोदपूर्वक जीवन व्यतीत करें ॥१४,१.२२॥

पूर्वापरं चरतो मायैतौ शिशू क्रीडन्तौ परि यातोऽर्णवम् ।
विश्वान्यो भुवना विचष्ट ऋतूंरन्यो विदधज्जायसे नवः ॥१४,१.२३॥

ये दोनों शिशु (सूर्य और चन्द्रमा) अपने तेज से पूर्व और पश्चिम में विचरते हैं। ये दोनों क्रीड़ा करते हुए यज्ञ में पहुँचते हैं। उन दोनों में से एक (सूर्य) सभी लोकों को देखता है तथा दूसरा (चन्द्र) ऋतुओं का निर्धारण करते हुए बार-बार (उदित-अस्त होता हुआ) नवीन होता है ॥१४,१.२३॥

नवोनवो भवसि जायमानोऽह्नां केतुरुषसामेष्यग्रम् ।
भागं देवेभ्यो वि दधास्यायन् प्र चन्द्रमस्तिरसे दीर्घमायुः ॥१४,१.२४॥

हे चन्द्रदेव ! नित्य उदित होकर आप नित-नवीन होते हैं। आप अपनी कलाओं के कारण ह्रास और वृद्धि को प्राप्त होते हुए प्रतिपदा आदि तिथियों के ज्ञापक हैं । आप उष: काल में सूर्य के समक्ष आते हैं और सभी देवों को उनका हविभाग देते हैं। हे चन्द्रदेव ! आप चिरायु प्रदान करते हैं ॥१४,१.२४॥

परा देहि शामुल्यं ब्रह्मभ्यो वि भजा वसु ।
कृत्यैषा पद्वती भूत्वा जाया विशते पतिम् ॥१४,१.२५॥

,शामुल्य (शरीरस्थ मल विकारों अथवा मन पर छाये मलिन आवरणों) का परित्याग करें । ब्राह्मणों (या ब्रह्म विचार) को

धन या आवास प्रदान करें । (इस प्रयोग से) कृत्या शक्ति (शमित होकरी जाया (जन्म देने वाली) होकर पति के साथ सहगामिनी बन जाती है ॥१४,१.२५॥

नीललोहितं भवति कृत्यासक्तिर्व्यज्यते ।
एधन्ते अस्या ज्ञातयः पतिर्बन्धेषु बध्यते ॥१४,१.२६॥

(सूर्या या वधू) जब नील-लोहित (क्रुद्ध या रजस्वला) होती है, तब उस पर कृत्या शक्ति अभिव्यक्त होती है। उसी के अनुकूल तत्त्व वर्धित होते हैं। पति उसके प्रभाव से बन्धन में बँध (मर्यादित हो जाता है ॥१४,१.२६॥

अश्लीला तनूर्भवति रुशती पापयामुया ।
पतिर्यद्वध्वो वाससः स्वमङ्गमभ्यूर्णुते ॥१४,१.२७॥

उक्त (कृत्या जन्य) विकारों की स्थिति में स्त्री पीड़ादायक होती है। ऐसी स्थिति में वधू से संयुक्त होने से पति का शरीर भी कान्तिरहित तथा रोगादि से दूषित हो जाता है ॥१४,१.२७॥

आशसनं विशसनमथो अधिविकर्तनम् ।
सूर्यायाः पश्य रूपाणि तानि ब्रह्मोत शुम्भति ॥१४,१.२८॥

सूर्या का स्वरूप कैसा है, इसे देखें । इसका वस्त्र कहीं एक जगह फटा हुआ है, कहीं बीच में से, तो कहीं चारों ओर से कटा हुआ है, सृष्टि निर्माणकर्ता ब्रह्मा ही इसे सुशोभित करते हैं ॥१४,१.२८॥

तृष्टमेतत्कटुकमपाष्ठवद्विषवन् नैतदत्तवे ।
सूर्यां यो ब्रह्मा वेद स इद्वाधूयमर्हति ॥१४,१.२९॥

यह स्थिति दोषपूर्ण, अग्रहणीय, दूर रखने योग्य एवं विष के समान घातक (पीड़ाजनक) है । यह व्यवहार के योग्य नहीं है, जो मेधावी विद्वान्, सूर्या को भली प्रकार जानते हैं, वे ही वधू के साथ हितकारी सम्बन्ध स्थापित करने योग्य होते हैं ॥२९॥

स इत्तत्स्योनं हरति ब्रह्मा वासः सुमङ्गलम् ।
प्रायश्चित्तिं यो अध्येति येन जाया न रिष्यति ॥१४,१.३०॥

उसी मंगलकारी और सुखकर वस्त्र को ब्रह्मा (ब्राह्मण धारण करते हैं, जिससे प्रायश्चित्त विधान सम्पन्न होता है और धर्मपत्नी असमय (अकाल मृत्यु से मुक्त रहती है ॥१४,१.३०॥

युवं भगं सं भरतं समृद्धमृतं वदन्तावृतोद्येषु ।

ब्रह्मणस्पते पतिमस्यै रोचय चारु संभलो वदतु वाचमेताम् ॥१४,१.३१॥

आप दोनों स्त्री-पुरुष सद्व्यवहार में अवस्थित रहकर समृद्धि सौभाग्य को अर्जित करें । हे ब्रह्मणस्पते ! स्त्री के हृदय में पति के सम्बन्ध में आदर-भावना रहे तथा पति भी सुन्दर और मधुर वाणी का प्रयोग करे ॥१४,१.३१॥

इहेदसाथ न परो गमाथेमं गावः प्रजया वर्धयाथ ।
शुभं यतीरुस्रियाः सोमवर्चसो विश्वे देवाः क्रन्न् इह वो मनांसि ॥१४,१.३२॥

गृहस्थ जनों के घर में गौएँ स्थित हों । वे कभी गृह का परित्याग न करें । वे श्रेष्ठ सन्तानों के साथ समृद्ध हों । हे गौओ ! आप मंगल को प्राप्त कराने में सहायक और चन्द्र के समान तेजस्विता युक्त हों । विश्वेदेवा आपके मन को यहीं (गृहों में) स्थिर करें ॥१४,१.३२॥

इमं गावः प्रजया सं विशाथायं देवानां न मिनाति भागम् ।
अस्मै वः पूषा मरुतश्च सर्वे अस्मै वो धाता सविता सुवाति ॥१४,१.३३॥

हे गौओ ! आप अपने बछड़ों के साथ इस घर में प्रविष्ट हों, इससे देवों का भाग विलुप्त नहीं होता । पूषादेव, मरुद्गण, विधाता तथा सवितादेव इसी मनुष्य के निमित्त आपकी उत्पत्ति करते हैं ॥१४,१.३३॥

अनृक्षरा ऋजवः सन्तु पन्थनो येभिः सखायो यन्ति नो वरेयम् ।
सं भगेन समर्यम्णा सं धाता सृजतु वर्चसा ॥१४,१.३४॥

जिन मार्गों से हमारे सभी मित्र कन्या के घर की ओर जाते हैं, वे मार्ग आपके लिए निष्कंटक और सुगमतापूर्ण हों । परमात्मा (धातादेव) आपको सौभाग्य, तेजस्विता और सूर्यशक्ति के साथ उचित रीति से संयुक्त करें ॥१४,१.३४॥

यच्च वर्चो अक्षेषु सुरायां च यदाहितम् ।
यद्गोष्वश्विना वर्चस्तेनेमां वर्चसावतम् ॥१४,१.३५॥

हे अश्विनीकुमारो ! जो तेजस्विता आँखों में, सम्पत्ति में और गौओं में विद्यमान है, उसी तेज से आप इसका (वधू का) संरक्षण करें ॥१४,१.३५॥

येन महानघ्न्या जघनमश्विना येन वा सुरा ।
येनाक्षा अभ्यषिच्यन्त तेनेमां वर्चसावतम् ॥१४,१.३६॥

हे अश्विनीदेवो ! जिस तेज से महान् गौ का जघन अर्थात् दुग्धाशय भाग, जिससे सम्पत्ति और आँखें अभिपूरित हैं, उसी से आप इस (वधू) का संरक्षण करें ॥१४,१.३६॥

यो अनिध्मो दीदयदप्स्वन्तर्यं विप्रास ईडते अध्वरेषु ।
अपां नपान् मधुमतीरपो दा याभिरिन्द्रो वावृधे वीर्यावान् ॥१४,१.३७॥

स्तोतागण जिसकीं यज्ञकाल में प्रार्थना करते हैं तथा जो बिना ईंधन (काष्ठ) के अन्तरिक्ष में विद्युत्रूप में प्रदीप्त होते हैं, वे हमें वृष्टिरूप जल प्रदान करें, जिससे इन्द्रदेव तेजस्वी होकर अपनी पराक्रमशक्ति को उत्पन्न करें ॥१४,१.३७॥

इदमहं रुशन्तं ग्राभं तनूदूषिमपोहामि ।
यो भद्रो रोचनस्तमुदचामि ॥१४,१.३८॥

हम शरीर को दोषमुक्त करने वाले रोग बीजों को दूर हटाते हैं और उसमें जो कल्याणकारी तेजस्वी तत्त्व है, उसे प्राप्त करते हैं ॥१४,१.३८॥

आस्यै ब्राह्मणाः स्नपनीर्हरन्त्ववीरघ्नीरुदजन्त्वापः ।

अर्यम्णो अग्निं पर्येतु पूषन् प्रतीक्षन्ते श्वशुरो देवरश्च ॥१४,१.३९॥

ब्रह्मनिष्ठ लोग इसके निमित्त स्नान करने योग्य जल लेकर आएँ, यह जल निरर्थक भीरुता को नष्ट करके बल वृद्धि करने वाला हो । है पूषादेव ! वे अर्यमा और अग्नि की परिक्रमा करें। इसके (वधू के) श्वसुर और देवर ससुराल में इसकी प्रतीक्षा करते हैं ॥१४,१.३९॥

शं ते हिरण्यं शमु सन्त्वापः शं मेथिर्भवतु शं युगस्य तर्द्म ।
शं त आपः शतपवित्रा भवन्तु शमु पत्या तन्वं सं स्पृशस्व ॥१४,१.४०॥

हे सौभाग्यवती वधु ! आपके निमित्त सुवर्ण, जल, गोबन्धन स्तम्भ और युग (जुआ) का छिद्र आदि सभी कल्याणकारी हों । सैकड़ों प्रकार से पवित्रता प्रदान करने वाला जलतत्त्व सुखकारक हो। आप कल्याण के निमित्त पति के शरीर का स्पर्श करें ॥१४,१.४०॥

खे रथस्य खेऽनसः खे युगस्य शतक्रतो ।
अपालामिन्द्र त्रिष्पूत्वाकृणोः सूर्यत्वचम् ॥१४,१.४१॥

उन शतक्रतु (शतकर्मा- इन्द्रदेव) ने रथ (इन्द्रिययुक्त काया), अनस (शकट की तरह पोषक प्राण) तथा दोनों को जोड़ने वाले 'युग' (मन) इन तीन स्थानों या छिद्रों से अपाला को पवित्र करके उसकी त्वचा (बाहरी संरक्षक सतह) को सूर्यदेव के तेज से युक्त बना दिया ॥१४,१.४१॥

आशासाना सौमनसं प्रजां सौभाग्यं रयिम् ।
पत्युरनुव्रता भूत्वा सं नह्यस्वामृताय कम् ॥१४,१.४२॥

आप श्रेष्ठ मनोभावों, सुसन्तति, सौभाग्य और वैभव की अभिलाषा करती हुई, पति के अनुकूल सदाचरण से युक्त होकर अमरत्व प्राप्ति के श्रेयस्कर मार्ग पर आरूढ़ हों ॥१४,१.४२॥

यथा सिन्धुर्नदीनां साम्राज्यं सुषुवे वृषा ।
एवा त्वं सम्राज्ञ्येधि पत्युरस्तं परेत्य ॥१४,१.४३॥

जिस प्रकार रलवर्षक महासागर नदियों के साम्राज्य का उपभोग करते हैं, उसी प्रकार पतिगृह में पहुँचकर यह वधू स्वयं को उसकी सम्राज्ञी मानकर गृहस्थ- साम्राज्य का संचालन करे ॥१४,१.४३॥

सम्राज्ञ्येधि श्वशुरेषु सम्राज्ञ्युत देवृषु ।

ननान्दुः सम्राज्ञ्येधि सम्राज्ञ्युत श्वश्र्वाः ॥१४,१.४४॥

हे वधु ! आप सास, श्वसुर, ननद, और देवरों की सम्राज्ञी (महारानी) के समान हों, आप सबके ऊपर स्वामिनी स्वरूपा हों ॥१४,१.४४॥

या अकृन्तन्न् अवयन् याश्च तत्निरे या देवीरन्तामभितोऽददन्त ।
तास्त्वा जरसे सं व्ययन्त्वायुष्मतीदं परि धत्स्व वासः ॥१४,१.४५॥

जिन देवी स्वरूपा स्त्रियों ने (सूत्र) कातकर, बुनकर इस वस्त्र को विस्तृत किया है और जो चारों ओर के अन्तिम भागों को उचित रीति से बनाती हैं, वे वृद्धावस्था पर्यन्त आपके लिए उचित वस्त्रों की व्यवस्था करती रहें । हे देवि ! आप दीर्घायु होकर इस वस्त्र को धारण करें ॥१४,१.४५॥

जीवं रुदन्ति वि नयन्त्यध्वरं दीर्घामनु प्रसितिं दीध्युर्नरः ।
वामं पितृभ्यो य इदं समीरिरे मयः पतिभ्यो जनये परिष्वजे ॥१४,१.४६॥

हे अश्विनीकुमारो ! जो पुरुष अपनी पत्नी की जीवन रक्षा के लिए रुदन तक करते हैं, उन्हें यज्ञादि सत्कर्मों में नियोजित

करते हैं, गर्भाधानादि संस्कार से सन्तानोत्पादन करके पितृयज्ञ में नियोजित करते हैं, उनकी स्त्रियाँ उन्हें सुख और सहयोग प्रदान करती हैं ॥१४,१.४६॥

स्योनं ध्रुवं प्रजायै धारयामि तेऽश्मानं देव्याः पृथिव्या उपस्थे ।
तमा तिष्ठानुमाद्या सुवर्चा दीर्घं त आयुः सविता कृणोतु ॥१४,१.४७॥

मैं (पति) इस सुखप्रद स्थिर पत्थर जैसे आधार को पृथ्वी देवी की गोद में अपनी सन्तान के लिए स्थापित करता हूँ। आप श्रेष्ठ, तेजस्विता- सम्पन्न और आनन्दित होकर इस पत्थर पर चढ़े । सवितादेव आपकी आयु में वृद्धि करें ॥१४,१.४७॥

येनाग्निरस्या भूम्या हस्तं जग्राह दक्षिणम् ।
तेन गृह्णामि ते हस्तं मा व्यथिष्ठा मया सह प्रजया च धनेन च ॥१४,१.४८॥

जिस पवित्र उद्देश्य से अग्निदेव ने इस भूमि के दाहिने हाथ को ग्रहण किया है, उसी पवित्र भावना से मैं (पति) आपका (वधू का) पाणिग्रहण करता हूँ। आप दुःख-कष्टों से रहित

होकर मेरे साथ सुसन्तति और ऐश्वर्यसम्पदा के साथ रहें ॥१४,१.४८॥

देवस्ते सविता हस्तं गृह्णातु सोमो राजा सुप्रजसं कृणोतु ।
अग्निः सुभगां जतवेदाः पत्ये पत्नीं जरदष्टिं कृणोतु ॥१४,१.४९॥

हे वधु ! सविता आपका (वधू का) पाणिग्रहण करें, राजा सोम आपको श्रेष्ठ सन्तानों से युक्त करें । जातवेदा अग्नि आपको सौभाग्ययुक्त करते हुए वृद्धावस्था तक पति के साथ वास करने वाली बनाएँ ॥१४,१.४९॥

गृह्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः ।
भगो अर्यमा सविता पुरंधिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः ॥१४,१.५०॥

हे वधु ! आपके हाथ को सौभाग्य वृद्धि के लिए मैं ग्रहण करता हूँ । मुझे पतिरूप में स्वीकार करके, आप वृद्धावस्था पर्यन्त (मेरे) साथ रहना, यही मेरी प्रार्थना है। भग, अर्यमा, सविता और पूषादेवों ने आपको मेरे निमित्त गृहस्थ धर्म का पालन करने के लिए प्रदान किया है ॥१४,१.५०॥

भगस्ते हस्तमग्रहीत्सविता हस्तमग्रहीत्।

पत्नी त्वमसि धर्मणाहं गृहपतिस्तव ॥१४,१.५१॥

भगदेव और सवितादेव ने ही मुझे माध्यम बनाकर आपके हाथ को ग्रहण किया है। अब आप धर्मानुसार मेरी धर्मपत्नी हैं और मैं आपका गृहस्वामी हूँ ॥१४,१.५१॥

ममेयमस्तु पोष्या मह्यं त्वादाद्बृहस्पतिः ।
मया पत्या प्रजावति सं जीव शरदः शतम् ॥१४,१.५२॥

यह स्त्री मेरा पोषण करने वाली हो, बृहस्पतिदेव ने आपको मेरे लिए सौंपा है । हे सन्तानों से युक्त स्त्री ! आप मुझ पति के साथ सौ वर्ष तक जीवित रहें ॥१४,१.५२॥

त्वष्टा वासो व्यदधाच्छुभे कं बृहस्पतेः प्रशिषा कवीनाम् ।
तेनेमां नारीं सविता भगश्च सूर्यामिव परि धत्तां प्रजया ॥१४,१.५३॥

हे शुभकारिणी स्त्री ! बृहस्पतिदेव और मेधावीजनों के आशीर्वाद से त्वष्टादेव ने इस सुखकर वस्त्र को विनिर्मित किया है । सवितादेव और भगदेव जिस प्रकार सूर्यपुत्री को वस्त्र धारण कराते हैं, उसी प्रकार इस स्त्रीको सन्तानादि से परिपूर्ण करें ॥१४,१.५३॥

इन्द्राग्नी द्यावापृथिवी मातरिश्वा मित्रावरुणा भगो अश्विनोभा ।
बृहस्पतिर्मरुतो ब्रह्म सोम इमां नारिं प्रजया वर्धयन्तु ॥१४,१.५४॥

इन्द्र, अग्नि, द्यावा-पृथिवी, वायु, मित्र, वरुण, भग दोनों अश्विनीकुमार, बृहस्पति, मरुद्गण, ब्रह्म और सोम ये सभी देवशक्तियाँ इस नारी को श्रेष्ठ सन्तानों के साथ प्रवृद्ध करें ॥१४,१.५४॥

बृहस्पतिः प्रथमः सूर्यायाः शीर्षे केशामकल्पयत्।
तेनेमामश्विना नारीं पत्ये सं शोभयामसि ॥१४,१.५५॥

पहले बृहस्पतिदेव ने सूर्या का केश विन्यास किया था, उसी का अनुसरण करते हुए दोनों अश्विनीकुमार इस नारी को पति प्राप्ति के लिए सुशोभित करें ॥१४,१.५५॥

इदं तद्रूपं यदवस्त योषा जायां जिज्ञासे मनसा चरन्तीम् ।
तामन्वर्तिष्ये सखिभिर्नवग्वैः क इमान् विद्वान् वि चचर्त पाशान् ॥१४,१.५६॥

यह वहीं दर्शनीयरूप है, जिसे युवा स्त्री धारण करती है। युवती के मनोभावों को मैं भली प्रकार समझता हूँ । नूतन

गतिवाली सखियों के अनुसार मैं उस(स्त्री) का अनुसरण करता हूँ । इन बालों का गुन्थन किस समझदार स्त्री (सखी) ने किया है ॥१४,१.५६॥

अहं वि ष्यामि मयि रूपमस्या वेददित्पश्यन् मनसः कुलायम् ।
न स्तेयमद्मि मनसोदमुच्ये स्वयं श्रथ्नानो वरुणस्य पाशान् ॥१४,१.५७॥

मैं इस स्त्री के अन्त:करण को जानता हुआ और उसकी छवि को देखता हुआ, उसे अपने हृदय में प्रतिष्ठित करता हूँ। मैं चोरी का अन्न ग्रहण नहीं करता। मैं स्वयं वरुणदेव के बन्धनों को ढीला करता हुआ मन की अस्थिरता से युक्त होता हूँ ॥१४,१.५७॥

प्र त्वा मुञ्चामि वरुणस्य पाशाद्येन त्वाबध्नात्सविता सुशेवाः ।
उरुं लोकं सुगमत्र पन्थां कृणोमि तुभ्यं सहपत्न्यै वधु ॥१४,१.५८॥

सवितादेव ने जिस वरुणपाश से आपको आबद्ध किया था, हे स्त्री ! उस वरुण पाश से मैं आपको मुक्त करता हूँ। आप सुयोग्या, सहधर्मिणी के लिए विस्तृत स्थान और श्रेष्ठ गमन योग्य मार्ग निर्मित करता हूँ ॥१४,१.५८॥

उद्यच्छध्वमप रक्षो हनाथेमं नारीं सुकृते दधात ।
धाता विपश्चित्पतिमस्यै विवेद भगो राजा पुर एतु प्रजानन्
॥१४,१.५९॥

(धर्मपत्नी को पीड़ित करने वाले) दुष्ट राक्षसों का संहार करने के लिए आप लोग अस्त्र-शस्त्रों को उठाएँ । इस स्त्री को सदैव पुण्यकर्मों में संलग्न रखें, ज्ञान सम्पन्न विधाता के मार्गदर्शन से इसे पति की प्राप्ति हुई है । राजा भग ऐसा जानते हुए विवाह कार्य में अग्रगामी हों ॥१४,१.५९॥

भगस्ततक्ष चतुरः पादान् भगस्ततक्ष चत्वार्युष्पलानि ।
त्वष्टा पिपेश मध्यतोऽनु वर्ध्रान्त्सा नो अस्तु सुमङ्गलली
॥१४,१.६०॥

भगदेव ने पावों के चार आभूषण और शरीर पर धारण करने के चार कमल पुष्प बनाये; त्वष्टादेव ने कमर में बाँधने योग्य कमरपट्टा बनाया। इन्हें धारण करके यह स्त्री श्रेष्ठ-मंगलकारिणी बने ॥१४,१.६०॥

सुकिंशुकं वहतुं विश्वरूपं हिरण्यवर्णं सुवृतं सुचक्रम् ।
आ रोह सूर्ये अमृतस्य लोकं स्योनं पतिभ्यो वहतुं कृणु त्वम्
॥१४,१.६१॥

हे सूर्य पुत्री ! आप अपने पतिगृह की ओर जाते हुए सुन्दर प्रकाशयुक्त पलाशवृक्ष से बने तथा शाल्मलिवृक्ष या मलरहित (काष्ठ) से विनिर्मित नानारूप, स्वर्णिम वर्ण, श्रेष्ठ और सुन्दर चक्रयुक्त रथ पर आरूढ़ हों। आप पति के निमित्त, अमृत स्वरूप लोक को सुखकारी बनाएँ ॥१४,१.६१॥

अभ्रातृघ्नीं वरुणापशुघ्नीं बृहस्पते ।
इन्द्रापतिघ्नीं पुत्रिणीमास्मभ्यं सवितर्वह ॥१४,१.६२॥

हे वरुण, बृहस्पति, इन्द्र और सविता देवो ! आप इस वधू को पतिगृह में भाई, पशु और पति किसी को भी हानि न पहुँचाने वाली (सुखदायी) तथा श्रेष्ठ सन्तति प्रदात्री बनाएँ ॥१४,१.६२॥

मा हिंसिष्टं कुमार्यं स्थूणे देवकृते पथि ।
शालाया देव्या द्वारं स्योनं कृण्मो वधूपथम् ॥१४,१.६३॥

हे दो स्तम्भो ! आप देवशक्तियों द्वारा बनाये मार्ग पर इस वधू को ले जाने वाले रथ को हानि न पहुँचाएँ। हम गृहरूप देवता के द्वार पर वधू के आगमन मार्ग को सुखदायक बनाते हैं ॥१४,१.६३॥

ब्रह्मापरं युज्यतां ब्रह्म पूर्वं ब्रह्मान्ततो मध्यतो ब्रह्म सर्वतः ।
अनाव्याधां देवपुरां प्रपद्य शिवा स्योना पतिलोके वि राज
॥१४,१.६४॥

इस वधू के आगे, पीछे, भीतर, मध्य सभी ओर ब्रह्म अर्थात् ईश प्रार्थना के मन्त्र गुञ्जरित हों । आधि व्याधि रहित पति की गृहरूप देवनगरी को प्राप्त करके यह पतिगृह में मंगलकारिणी और सुख देने वाली होकर विराजमान रहे ॥१४,१.६४॥

॥अथर्ववेद – चतुर्दशं काण्डम्॥

सूक्त २- विवाह प्रकरण सूक्त

अग्नि देव की स्तुति, सरस्वती की प्रशंसा, स्त्री के लिए सुखकारी उपदेश, वंशवृद्धि का विषय, बृहस्पति देव का वर्णन, पति और पत्नी का प्रेम और सविता देव से दीर्घजीवन की कामना

तुभ्यमग्रे पर्यवहन्त्सूर्यां वहतुना सह ।
स नः पतिभ्यो जायां दा अग्ने प्रजया सह ॥१४,२.१॥

हे अग्निदेव ! दहेज (कन्याधन) के रूप में सूर्या को सर्वप्रथम आप (यज्ञाग्नि) के ही समीप ले जाया जाता है। आप पति को श्रेष्ठ सुसन्तति वाली स्त्री प्रदान करें अर्थात् विवाहितों को सुसन्तति से सम्पन्न बनाएँ ॥१४,२.१॥

पुनः पत्नीमग्निरदादायुषा सह वर्चसा ।
दीर्घायुरस्या यः पतिर्जीवाति शरदः शतम् ॥१४,२.२॥

अग्नि ने पुनः दीर्घायु, तेजस्वी और कान्तियुक्त पत्नी प्रदान की। इसके जो पति हैं, वे चिरंजीवी होकर शतायु तक जीवित रहें ॥१४,२.२॥

सोमस्य जाया प्रथमं गन्धर्वस्तेऽपरः पतिः ।
तृतीयो अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः ॥१४,२.३॥

हे सूर्ये ! सोम ने सर्वप्रथम पनीरूप में आपको प्राप्त किया । तदनन्तर गन्धर्व आपके पति हुए, आपके तीसरे पति अग्निदेव हैं। मनुष्य वंशज आपके चौथे पति हैं ॥१४,२.३॥

सोमो ददद्गन्धर्वाय गन्धर्वो दददग्नये ।
रयिं च पुत्रांस्चादादग्निर्मह्यमथो इमाम् ॥१४,२.४॥

सोम ने, (स्त्री को) गन्धर्व को दिया। गंधर्व ने अग्नि को दिया, तदनन्तर अग्नि ने (भूमि से उत्पन्न) ऐश्वर्य और (नारों से उत्पन्न) सन्तानसहित मुझे (मनुष्य को प्रदान किया ॥१४,२.४॥

आ वामगन्त्सुमतिर्वाजिनीवसू न्यश्विना हृत्सु कामा अरंसत ।
अभूतं गोपा मिथुना शुभस्पती प्रिया अर्यम्णो दुर्यामशीमहि
॥१४,२.५॥

हे अन्न और ऐश्वर्ययुक्त अश्विनीकुमारो ! आप हमारे प्रति कृपादृष्टि रखें, हमारी मानसिक इच्छाओं की पूर्ति में सहायक हों तथा आप हमारे लिए कल्याणकारी हों । हम

अपने पति की प्रेमपात्र बनकर पतिगृह को सुशोभित करें ॥१४,२.५॥

सा मन्दसाना मनसा शिवेन रयिं धेहि सर्ववीरं वचस्यम् ।
सुगं तीर्थं सुप्रपाणं शुभस्पती स्थाणुं पथिष्ठामप दुर्मतिं हतम् ॥१४,२.६॥

हे देवि ! आप कल्याणकारी मन से सभी वीरों से युक्त श्लाघ्य धन को पुष्ट करें। है अश्विनीकुमारो ! आप इस तीर्थ को फलीभूत करते हुए पथ में मिलने वाली दुर्मति का निवारण करें ॥१४,२.६॥

या ओषधयो या नद्यो यानि क्षेत्राणि या वना ।
तास्त्वा वधु प्रजावतीं पत्ये रक्षन्तु रक्षसः ॥१४,२.७॥

हे सौभाग्यवती वधु ! जो ओषधियाँ नदियों, खेत और वन में हैं, वे आपको सन्ततियुक्त करें और आपके पति को आसुरी वृत्तियों से सुरक्षित रखें ॥१४,२.७॥

एमं पन्थामरुक्षाम सुगं स्वस्तिवाहनम् ।
यस्मिन् वीरो न रिष्यत्यन्येषां विन्दते वसु ॥१४,२.८॥

हम उन सुगम मार्गों से प्रयाण करें, जो रथादि वाहनों के लिए कल्याणकारी हैं, जिनमें निर्भयता के कारण शौर्य-क्षमता का क्षय न हो अथवा धन-सम्पदा प्राप्त हो ॥१४,२.८॥

इदं सु मे नरः शृणुत ययाशिषा दंपती वाममश्नुतः ।
ये गन्धर्वा अप्सरसश्च देवीरेषु वानस्पत्येषु येऽधि तस्थुः ।
स्योनास्ते अस्यै वध्वै भवन्तु मा हिंसिषुर्वहतुमुह्यमानम् ॥१४,२.९॥

हे मनुष्यो ! आप सभी लोग हमारी इस उद्घोषणा को सुनें, जिसके आशीर्वाद से विवाहित स्त्री- पुरुष श्रेष्ठ सांसारिक सुखों का उपभोग करें । इन वनस्पतियों में जो दिव्य गंधर्व और अप्सराएँ हैं, वे इस वधू के लिए सुखदायी हों और इस कन्याधन को ले जाने वाले रथ को विनष्ट न करें ॥१४,२.९॥

ये वध्वश्चन्द्रं वहतुं यक्ष्मा यन्ति जनामनु ।
पुनस्तान् यज्ञिया देवा नयन्तु यत आगताः ॥१४,२.१०॥

चन्द्रमा की तरह शोभन वधू के जीवन में जो (शारीरिक-मानसिक रोग जन्मदाता माता-पिता से स्वभावत: आते हैं, यजनीय देवगण उन्हें उनके पिछले स्थान पर पुनः लौटाएँ, जहाँ से वे आए थे ॥१४,२.१०॥

मा विदन् परिपन्थिनो य आसीदन्ति दंपती ।
सुगेन दुर्गमतीतामप द्रान्त्वरातयः ॥१४,२.११॥

जो रोगरूपी शत्रु दम्पती के समीप आते हैं, वे विनष्ट हों । वे सुगम मार्गों से दुर्गम स्थानों में चले जाएँ। शत्रुसमूह हमारे यहाँ से दूर चले जाएँ ॥१४,२.११॥

सं काशयामि वहतुं ब्रह्मणा गृहैरघोरेण चक्षुषा मित्रियेण ।
पर्याणद्धं विश्वरूपं यदस्ति स्योनं पतिभ्यः सविता तत्कृणोतु ॥१४,२.१२॥

कन्याधन से युक्त रथ को घर के सभी परिजन ज्ञानपूर्वक प्रेमपूर्ण दृष्टि से देखें। इस प्रकार हम इसे उद्घाटित करते हैं। इसमें जो भी (गृहस्थाश्रम के लिए उपयोगी) विविध-वर्णो की वस्तुएँ बँधी हैं, उन्हें सवितादेव पति पत्नी के लिए सुखकर बनाएँ ॥१४,२.१२॥

शिवा नारीयमस्तमागन्न् इमं धाता लोकमस्यै दिदेश ।
तामर्यमा भगो अश्विनोभा प्रजापतिः प्रजया वर्धयन्तु ॥१४,२.१३॥

यह मंगलकारी स्त्री पतिगृह में पहुँच गयी है । विधाता ने इसके लिए यही स्थान (पतिगृह) निर्देशित किया है। दोनों अश्विनीकुमार अर्यमादेव, भगदेव तथा प्रजापति ब्रह्मा- ये सभी देवगण इस वधू को श्रेष्ठ सन्तति से समृद्ध करें ॥१४,२.१३॥

आत्मन्वत्युर्वरा नारीयमागन् तस्यां नरो वपत बीजमस्याम् ।
सा वः प्रजां जनयद्वक्षणाभ्यो बिभ्रती दुग्धमृषभस्य रेतः ॥१४,२.१४॥

आत्मिक शक्तिसम्पन्न तथा श्रेष्ठ सन्तति की उत्पादन शक्ति से युक्त यह स्त्री वधू के रूप में पति के घर पहुँच गई है । है पौरुष सम्पन्न मनुष्य ! आप इस स्त्री में अपने वीर्य रूप बंशानुक्रम बीज का वपन करें, तत्पश्चात् यह स्त्री वीर्यवान् पुरुष के वीर्य और दूध को धारण करती हुई अपने गर्भाशय से सन्तान उत्पन्न करे ॥१४,२.१४॥

प्रति तिष्ठ विराडसि विष्णुरिवेह सरस्वति ।
सिनीवालि प्र जायतां भगस्य सुमतावसत्॥१४,२.१५॥

हे सरस्वती स्वरूपा स्त्री ! आप पतिगृह में गौरव (प्रतिष्ठा) को प्राप्त करें, आप घर की साम्राज्ञी हैं, आपके पति विष्णुदेव के समान यहाँ हैं और आप लक्ष्मी स्वरूपा हैं । हे

अन्नवती देवि ! आपके ऊपर भाग्यदेवता की महान् अनुकम्पा रहे और आपको श्रेष्ठ सन्तति का लाभ प्राप्त हो ॥१४,२.१५॥

उद्व ऊर्मिः शम्या हन्त्वापो योक्त्राणि मुञ्चत ।
मादुष्कृतौ व्येनसावघ्न्यावशुनमारताम् ॥१४,२.१६॥

हे जल ! आपकी तरंगें रथ की धुरी से टकराती रहें । हे दुष्कर्महीना, पापरहिता, अनिन्दनीया नदियो ! आपको (प्रवाहित होने में कोई बाधा न हो ॥१४,२.१६॥

अघोरचक्षुरपतिघ्नी स्योना शग्मा सुशेवा सुयमा गृहेभ्यः ।
वीरसूर्देवृकामा सं त्वयैधिषीमहि सुमस्यमाना ॥१४,२.१७॥

हे वधु ! आप सुखकारिणी, स्नेहदृष्टि से युक्त, कल्याणकारिणी, सेवा करने वाली, श्रेष्ठ नियमों पर चलने वाली, वीर सन्तानों को जन्म देने वाली, देवर की (कल्याण) कामना वाली, पति को क्षीण न करने वालीं और शुभअन्तर्भावनाओं से युक्त हों, जिससे हम आपसे वृद्धि को प्राप्त करें ॥१४,२.१७॥

अदेवृघ्न्यपतिघ्नीहैधि शिवा पशुभ्यः सुयमा सुवर्चाः ।

प्रजावती वीरसूर्देवृकामा स्योनेममग्निं गार्हपत्यं सपर्य ॥१४,२.१८॥

देवर और पति को कष्ट न पहुँचाती हुई, पशुओं के लिए हितकारिणी, श्रेष्ठ नियमों पर चलने वाली, श्रेष्ठ तेजस्विता – सम्पन्न, सन्तानयुक्त वीर सन्तानों को जन्म देने वाली, पतिगृह में देवर का कल्याण चाहती हुई, सुखदायिनी बनकर आप इस गार्हपत्य अग्नि की हवन द्वारा अर्चना करें ॥१४,२.१८॥

उत्तिष्ठेतः किमिछन्तीदमागा अहं त्वेडे अभिभूः स्वाद्गृहात्। शून्यैषी निर्ऋते याजगन्थोत्तिष्ठाराते प्र पत मेह रंस्थाः ॥१४,२.१९॥

हे पाप देवी निर्ऋते ! आप यहाँ से उठे, आप कौन सी अभिलाषा से यहाँ उपस्थित हुई हैं ? हम अपने घर से भगाते हुए आपका निरादर करते हैं; क्योंकि आप घर को सुनसान (मरघट) करने की इच्छा से प्रेरित होकर यहाँ आई हैं, अतएव हे शत्रुरूपिणी नि#ते ! आप यहाँ से उठकर भाग जाएँ, यहाँ विचरण न करें ॥१४,२.१९॥

यदा गार्हपत्यमसपर्यैत्पूर्वमग्निं वधूरियम् ।
अधा सरस्वत्यै नारि पितृभ्यश्च नमस्कुरु ॥१४,२.२०॥

गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने से पूर्व वधू गार्हपत्य अग्नि की पूजा अर्चना करे, तत्पश्चात् हे स्त्री ! आप सरस्वती देवी और पितरजनों को नमन-वन्दन करें ॥२०॥

शर्म वर्मैतदा हरास्यै नार्या उपस्तिरे ।
सिनीवालि प्र जायतां भगस्य सुमतावसत्॥१४,२.२१॥

पति अपनी धर्मपत्नी के लिए आसनरूपी मृगचर्म (सुखदायी आसन-बिछौना) और संरक्षण साधन को लेकर आएँ । हे सिनीवालि (अन्नवती देवी) ! यह स्त्री भली प्रकार सन्तान को जन्म दे और सौभाग्य के श्रेष्ठआशीर्वाद को प्राप्त करे ॥१४,२.२१॥

यं बल्बजं न्यस्यथ चर्म चोपस्तृणीथन ।
तदा रोहतु सुप्रजा या कन्या विन्दते पतिम् ॥१४,२.२२॥

आपके द्वारा बिछाई गई चटाई और मृगचर्म पर यह श्रेष्ठ सन्तान को जन्म देने वाली और पति को प्राप्त करने वाली कन्या आरोहण करे ॥१४,२.२२॥

उप स्तृणीहि बल्बजमधि चर्मणि रोहिते ।
तत्रोपविश्य सुप्रजा इममग्निं सपर्यतु ॥१४,२.२३॥

सर्वप्रथम चटाई फैलाएँ, उस पर मृगचर्म को बिछाएँ, वहाँ श्रेष्ठ सन्तान को जन्म देने वाली स्त्री बैठकर अग्नि की अर्चना करे ॥१४,२.२३॥

आ रोह चर्मोप सीदाग्निमेष देवो हन्ति रक्षांसि सर्वा ।
इह प्रजां जनय पत्ये अस्मै सुज्यैष्ठ्यो भवत्पुत्रस्त एषः ॥१४,२.२४॥

आप मृगछाल पर आरोहण करके अग्निदेव के समीप बैठे। ये अग्निदेव सभी दुष्ट राक्षसों का संहार करने में सक्षम हैं । आप इस घर में अपने पति के लिए सुसन्तति को जन्म दें । आपकी यह प्रथम ज्येष्ठ सन्तान सुयोग्यऔर सुसंस्कृत बने ॥१४,२.२४॥

वि तिष्ठन्तां मातुरस्या उपस्थान् नानारूपाः पशवो जायमानाः ।
सुमङ्गल्युप सीदेममग्निं संपत्नी प्रति भूषेह देवान् ॥१४,२.२५॥

मातृत्व को धारण करने वाली इस स्त्री के साथ नानाविध रूप- वर्ण वाले, गाय आदि पशु रहें । हे उत्तम मंगलमयी

स्त्री ! आप अग्निदेव के समीप बैठकर देवों को सुशोभित करें ॥१४,२.२५॥

सुमङ्गली प्रतरणी गृहाणां सुशेवा पत्ये श्वशुराय शंभूः ।
स्योना श्वश्वै प्र गृहान् विशेमान् ॥१४,२.२६॥

हे वधु ! श्रेष्ठ मंगलकारिणी, गृहव्यवस्था का संचालन करने वाली, पति की सेवा करने वाली, श्वसुर को सुख पहुँचाने वाली तथा सास को आनन्दित करने वाली आप इस घर में प्रविष्ट हों ॥१४,२.२६॥

स्योना भव श्वशुरेभ्यः स्योना पत्ये गृहेभ्यः ।
स्योनास्यै सर्वस्यै विशे स्योना पुष्टायैषां भव ॥१४,२.२७॥

आप श्वसुरों के लिए मंगलमयी हों, पति और घर के लिए कल्याणकारिणी हों । आप सभी परिवारीजनों को सुख देती हुई उनकी पुष्टि के लिए सुखदायिनी बनें ॥१४,२.२७॥

सुमङ्गलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत ।
सौभाग्यमस्यै दत्त्वा दौर्भाग्यैर्विपरेतन ॥१४,२.२८॥

यह वधू मंगलकारिणी है । सभी जन एकत्र होकर इसे देखें । इसको सौभाग्य प्रदान करने का आशीर्वाद देकर, दुर्भाग्य दूर करते हुए वापस लौट जाएँ ॥१४,२.२८॥

या दुर्हार्दो युवतयो याश्चेह जरतीरपि ।
वर्चो न्वस्यै सं दत्ताथास्तं विपरेतन ॥१४,२.२९॥

जो द्वेष भावना से युक्त युवतियाँ और वृद्धा स्त्रियाँ हैं, वे सभी इस वधू को अपनी तेजस्विता देकर अपने-अपने घर वापस चली जाएँ ॥१४,२.२९॥

रुक्मप्रस्तरणं वह्यं विश्वा रूपाणि बिभ्रतम् ।
आरोहत्सूर्या सावित्री बृहते सौभगाय कम् ॥१४,२.३०॥

मन को सुन्दर लगने वाले बिस्तरों से युक्त, अनेक शोभा-सज्जा को धारण करने वाले सुखदायक रथ पर सूर्य पुत्री सावित्री विशाल सौभाग्य को उपलब्ध करने के लिए आरोहण करती हैं ॥१४,२.३०॥

आ रोह तल्पं सुमनस्यमानेह प्रजां जनय पत्ये अस्मै ।
इन्द्राणीव सुबुधा बुध्यमाना ज्योतिरग्रा उषसः प्रति जागरासि ॥१४,२.३१॥

आप मन में प्रसन्नता के भावों को धारण करती हुई बिस्तर पर आएँ और पति के लिए श्रेष्ठ सन्तति को जन्म दें । इन्द्राणी के समान श्रेष्ठ बुद्धिमती होकर, उष:काल से पहले जागकर निद्रा से निवृत्त होकर उठ जाएँ ॥१४,२.३१॥

देवा अग्रे न्यपद्यन्त पत्नीः समस्पृशन्त तन्वस्तनूभिः ।
सूर्येव नारि विश्वरूपा महित्वा प्रजावती पत्या सं भवेह
॥१४,२.३२॥

प्राचीनकाल में देवगण भी अपनी सहयोगी शक्तियों के सहभागी हुए और अपने शरीर को उनके शरीर के साथ संयुक्त करते थे। हे स्त्री ! आप भी सूर्या के समान अपनी महिमा से अनेक रूप होकर श्रेष्ठ संतति निर्माण की इच्छा से पति के साथ संयुक्त होकर वास करें ॥१४,२.३२॥

उत्तिष्ठेतो विश्वावसो नमसेडामहे त्वा ।
जामिमिछ पितृषदं न्यक्तां स ते भागो जनुषा तस्य विद्धि
॥१४,२.३३॥

हे ऐश्वर्य सम्पन्न वर श्रेष्ठ ! आप यहाँ से उठ खड़े हों, हम आपका स्वागत करते हैं। आप पिता के घर में वास करने वाली शोभायुक्त वधू का वरण करने की अभिलाषा करें,

वह आपका ही भाग है । इस स्त्री के जन्म सम्बन्धी वृत्तान्त आप जानें ॥१४,२.३३॥

अप्सरसः सधमादं मदन्ति हविर्धानमन्तरा सूर्यं च ।
तास्ते जनित्रमभि ताः परेहि नमस्ते गन्धर्वर्तुना कृणोमि ॥१४,२.३४॥

इस यज्ञ भूमि और सूर्य के बीच (अन्तरिक्ष) में अप्सराएँ (उर्वरधाराएँ साथ-साथ मिलकर प्रसन्नतादायक कर्म में संलग्न होती हैं। वहीं (अन्तरिक्षो आप (पुरुष) की तथा जनित्री (पत्नी या उर्वर प्रकृति) का (उत्पत्ति) स्थान है, आप (पुरुष) उनके समीप जाएँ । गन्धर्वो की ऋतु सामर्थ्य के साथ आपको नमन है ॥१४,२.३४॥

नमो गन्धर्वस्य नमसे नमो भामाय चक्षुषे च कृण्मः ।
विश्वावसो ब्रह्मणा ते नमोऽभि जाया अप्सरसः परेहि ॥१४,२.३५॥

गन्धर्व के हविर्भाग के लिए हमारा नमस्कार है और उनके तेजस्वी नेत्रों को भी हम नमन करते हैं । हे। विश्वावसो ! हम आपको ज्ञान के साथ नमन करते हैं। अप्सरारूप स्त्री की ओर आप बढ़े ॥१४,२.३५॥

राया वयं सुमनसः स्यामोदितो गन्धर्वमावीवृताम ।
अगन्त्स देवः परमं सधस्थमगन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः
॥१४,२.३६॥

हम धन- सम्पदा के साथ श्रेष्ठ मनस्वितायुक्त हों, यहाँ से हम गन्धर्वो को ऊपर भेजते हैं। वह ईश्वर (परमदेव) परम उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित हुआ है, जहाँ हम आयु को दीर्घ बनाते हुए पहुँचते हैं ॥१४,२.३६॥

सं पितरावृत्विये सृजेथां माता पिता च रेतसो भवाथः ।
मर्य इव योषामधि रोहयैनां प्रजां कृण्वाथामिह पुष्यतं रयिम्
॥१४,२.३७॥

हे स्त्री- पुरुषो ! आप अपने रेतस् (उत्पादक तेज) की सामर्थ्य से ही माता-पिता बनने में सक्षम होंगे। अत: ऋतुकाल में संयुक्त हों । वीर्यवान् पुरुष के समान इस स्त्री के साथ संयुक्त हों । आप दोनों सन्तान को जन्म दें और धन- सम्पदा भी बढ़ाएँ ॥१४,२.३७॥

तां पूषं छिवतमामेरयस्व यस्यां बीजं मनुष्या वपन्ति ।
या न ऊरू उशती विश्रयाति यस्यामुशन्तः प्रहरेम शेपः
॥१४,२.३८॥

हे पूषन् (पोषण में समर्थ ! आप उस कल्याणकारिणी स्त्री (उर्वराशक्ति) को प्रेरित करें, जिसमें मनुष्य बीज वपन करते हैं। वह प्रेम प्रदर्शित करती हुई (उल्लसित होती हुई) अपने ऊरु प्रदेश को विस्तारित करती है । उसके गर्भ में उत्साहपूर्वक (फलित होने के विश्वास से) बीज स्थापित किया जाए ॥१४,२.३८॥

आ रोहोरुमुप धत्स्व हस्तं परि ष्वजस्व जायां सुमनस्यमानः ।
प्रजां कृण्वाथामिह मोदमानौ दीर्घं वामायुः सविता कृणोतु ॥१४,२.३९॥

आप स्त्री के साथ प्रेम पूर्वक संयुक्त हों, प्रसन्नचित्त होकर स्त्री का स्पर्श करें। आप दोनों आनन्द विभोर होते हुए सन्तान को जन्म दें । सवितादेव आप दोनों (स्त्री- पुरुषों) की आयु में वृद्धि करें ॥१४,२.३९॥

आ वां प्रजां जनयतु प्रजापतिरहोरात्राभ्यां समनक्त्वर्यमा ।
अदुर्मङ्गली पतिलोकमा विशेमं शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१४,२.४०॥

प्रजापालक परमेश्वर आप दोनों के लिए संतान उत्पन्न करें । अर्यमादेव आप दोनों को दिन-रात एक साथ रखें । हे

वधु ! आप दोष- दुर्गुणों से रहित होती हुई पति के गृह में प्रविष्ट हों, आप हमारे दो पैर वाले और चतुष्पाद प्रजाओं के लिए सुखदायी हों ॥१४,२.४०॥

देवैर्दत्तं मनुना साकमेतद्वाधूयं वासो वध्वश्च वस्त्रम् ।
यो ब्रह्मणे चिकितुषे ददाति स इद्रक्षांसि तल्पानि हन्ति ॥१४,२.४१॥

मनु जी के साथ देवों ने इस वधू को वस्त्र प्रदान किया है, जो ज्ञाननिष्ठ ब्राह्मण के लिए इस वधू के वस्त्र दान करते हैं, वे निश्चित ही शयन स्थान में उत्पन्न होने वाले राक्षसों (कुसंस्कारों) को विनष्ट करते हैं ॥१४,२.४१॥

यं मे दत्तो ब्रह्मभागं वधूयोर्वाधूयं वासो वध्वश्च वस्त्रम् ।
युवं ब्रह्मणेऽनुमन्यमानौ बृहस्पते साकमिन्द्रश्च दत्तम् ॥१४,२.४२॥

हे बृहस्पति और इन्द्रदेवो ! आप दोनों ही ब्रह्मा के निर्देश से विवाह के समय के वधू – वस्त्र और सामान्य वधू के वस्त्र ब्राह्मण का भाग जानकर हमें प्रदान करें ॥१४,२.४२॥

स्योनाद्योनेरधि बध्यमानौ हसामुदौ महसा मोदमानौ ।
सुगू सुपुत्रौ सुगृहौ तराथो जीवावुषसो विभातीः ॥१४,२.४३॥

हे स्त्री- पुरुषो ! सुखदायक गृह में भली प्रकार जागते हुए, हास्य विनोद करते हुए, स्नेहपूर्वक प्रसन्नचित होते हुए, सुन्दर इन्द्रियों या गौओं से युक्त, सुसन्तति सम्पन्न, श्रेष्ठ गृह सामग्रियों से युक्त, जीवनतत्त्व को धारण करते हुए आप दोनों (नर-नारी अथवा पुरुष एवं प्रकृति प्रकाशमयी उषाओं (विकासमान जीवन के साथ तैर जाएँ (पार हो जाएँ ॥१४,२.४३॥

नवं वसानः सुरभिः सुवासा उदागां जीव उषसो विभातीः ।
आण्डात्पतत्रीवामुक्षि विश्वस्मादेनसस्परि ॥१४,२.४४॥

नूतन परिधान पहनते हुए, सुरक्षित जीवन को धारण करते हुए, सुन्दर निवास से युक्त हम जीवधारी मनुष्य तेजस्वी प्रभात वेला में जागते रहें । अण्डे से पक्षी के बाहर आने के समान हमें सभी प्रकार के दुष्कर्मो (पापों) से मुक्ति प्राप्त करें ॥१४,२.४४॥

शुम्भनी द्यावापृथिवी अन्तिसुम्ने महिव्रते ।
आपः सप्त सुस्रुवुर्देवीस्ता नो मुञ्चन्त्वंहसः ॥१४,२.४५॥

द्युलोक और पृथ्वी दोनों निकटतापूर्वक सुख प्रदान करने वाले महान् व्रत (नियम) पालने वाले तथा विशेष रूप से

शोभायमान हैं। इनके मध्य सात दिव्य जल (प्राण) प्रवाह बह रहे हैं। वे जल (प्राण) प्रवाह हमें पाप कर्मों से विमुक्त करें ॥१४,२.४५॥

सूर्यायै देवेभ्यो मित्राय वरुणाय च ।
ये भूतस्य प्रचेतसस्तेभ्य इदमकरं नमः ॥१४,२.४६॥

सूर्या (उषा), देवगण, मित्र और वरुणादि देवों तथा सभी प्राणियों को जो ज्ञान प्रदान करने वाले देव हैं, हम उन्हें प्रणाम करते हैं ॥१४,२.४६॥

य ऋते चिदभिश्रिषः पुरा जत्रुभ्य आतृदः ।
संधाता संधिं मघवा पुरूवसुर्निष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥१४,२.४७॥

जो इन्द्रदेव हँसुली (गले से नीचे की हड्डी) को रक्त निकलने से पूर्व संधान द्रव्य के बिना ही जोड़ देते हैं, जो कठिनतम कार्यों को सुगमता से सम्पन्न कर देते हैं), प्रचुर धन के स्वामी वे इन्द्रदेव छिन्न-भिन्न होने वालों को पुनः जोड़ (एकत्र कर देते हैं ॥१४,२.४७॥

अपास्मत्तम उछतु नीलं पिशङ्गमुत लोहितं यत्।

निर्दहनी या पृषातक्यस्मिन् तां स्थाणावध्या सजामि ॥१४,२.४८॥

जो नीला, पीला और लाल वर्ण का अज्ञानरूप धूम्र हैं, वह हमसे दूर भाग जाए। जो जलाने वाली दोषावस्था इसमें विद्यमान है, उसे हम स्तम्भ में स्थापित करते हैं ॥१४,२.४८॥

यावतीः कृत्या उपवासने यावन्तो राज्ञो वरुणस्य पाशाः ।
व्यृद्धयो या असमृद्धयो या अस्मिन् ता स्थाणावधि सादयामि ॥१४,२.४९॥

इस उपवस्त्र में जितने विघातक तत्त्व, राजा वरुण के पाश (बन्धन), दरिद्रतायुक्त स्थितियाँ तथा विकारों से युक्त दुरवस्थाएँ हैं, उन्हें हम इसी स्तम्भ में स्थापित करते हैं अर्थात् इस वस्त्र से पृथक् करते हैं ॥१४,२.४९॥

या मे प्रियतमा तनूः सा मे बिभाय वाससः ।
तस्याग्रे त्वं वनस्पते नीविं कृणुष्व मा वयं रिषाम ॥१४,२.५०॥

मेरा शरीर जो सुडौल और हृष्ट-पुष्ट है, वस्त्र धारण करने से उसकी कान्ति घटने लगती है, इसलिए है। वनस्पतिदेव

! सर्वप्रथम आप उसकी ग्रन्थि को (ठीक-ठीक) बनाएँ, जिससे हम व्यथित न हों ॥१४,२.५०॥

ये अन्ता यावतीः सिचो य ओतवो ये च तन्तवः ।
वासो यत्पत्नीभिरुतं तन् न स्योनमुप स्पृशात्॥१४,२.५१॥

जिस वस्त्र में (प्राणों और पंच तत्त्वों के) ताने-बाने वाले सूत्र हैं, जो उत्तम वस्त्र हमारी नारी वर्ग ने बुनकर तैयार किया है, जिसमें सुन्दर किनारियाँ और झालरें लगाई गई हैं, वह वस्त्र हमारे लिए सुखदायी स्पर्श देने वाला हो ॥१४,२.५१॥

उशतीः कन्यला इमाः पितृलोकात्पतिं यतीः ।
अव दीक्षामसृक्षत स्वाहा ॥१४,२.५२॥

पितृगृह से पतिगृह में आती हुई और श्रेष्ठ वर की कामना से युक्त ये कन्याएँ, गृहस्थधर्म के दीक्षावत को धारण करें, यह सुन्दर उक्ति है (अथवा इस संदर्भ में आहुति को समर्पित करते हैं) ॥१४,२.५२॥

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् ।
वर्चो गोषु प्रविष्टं यत्तेनेमां सं सृजामसि ॥१४,२.५३॥

बृहस्पतिदेव द्वारा रचित इस ओषधि अथवा दीक्षा को सम्पूर्ण देवों ने ग्रहण किया है, उसे हम गौओं (गौओं-इन्द्रियों) में प्रविष्ट हुए वर्चस् से संयुक्त करते हैं ॥१४,२.५३॥

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् ।
तेजो गोषु प्रविष्टं यत्तेनेमां सं सृजामसि ॥१४,२.५४॥

बृहस्पतिदेव द्वारा विरचित इस ओषधि या दीक्षा को विश्वेदेवों ने ग्रहण किया, उसे हम गौओं में प्रविष्ट हुई तेजस्विता से संयुक्त करते हैं ॥१४,२.५४॥

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् ।
भजो गोषु प्रविष्टो यस्तेनेमां सं सृजामसि ॥१४,२.५५॥

बृहस्पतिदेव द्वारा निर्मित इस ओषधि अथवा दीक्षा को विश्वेदेवों ने धारण किया, उसे हम गौओं में प्रविष्ट हुए परम सौभाग्य से संयुक्त करते हैं ॥१४,२.५५॥

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् ।
यशो गोषु प्रविष्टं यत्तेनेमां सं सृजामसि ॥१४,२.५६॥

बृहस्पतिदेव द्वारा सृजित यह ओषधि या दीक्षा सभी देवों द्वारा स्वीकार हुई है, उसे हम गौओं में प्रविष्ट हुई यशस्विता से संयुक्त करते हैं ॥१४,२.५६॥

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् ।
पयो गोषु प्रविष्टं यत्तेनेमां सं सृजामसि ॥१४,२.५७॥

बृहस्पति द्वारा रचित इस ओषधि या दीक्षा को समस्त देवों द्वारा धारण किया गया है । उसे हम गौओं में प्रविष्ट हुए दूध से संयुक्त करते हैं ॥१४,२.५७॥

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् ।
रसो गोषु प्रविष्टो यस्तेनेमां सं सृजामसि ॥१४,२.५८॥

बृहस्पति द्वारा निर्मित इस ओषधि अथवा दीक्षा को सभी देव शक्तियों ने धारण किया है। उसे हम गौओं में प्रविष्ट हुए रस से संयुक्त करते हैं ॥१४,२.५८॥

यदीमे केशिनो जना गृहे ते समनर्तिषू रोदेन कृण्वन्तोऽघम् ।
अग्निष्ट्वा तस्मादेनसः सविता च प्र मुञ्चताम् ॥१४,२.५९॥

यदि लम्बे केशयुक्त ये लोग आपके घर में कन्या के जाने से दुखित होकर रुदन करते हुए घूमते रहें, तो उस पाप से अग्नि और सवितादेव आपको बचाएँ ॥१४,२.५९॥

यदीयं दुहिता तव विकेश्यरुदद्गृहे रोदेन कृण्वत्यघम् ।
अग्निष्ट्वा तस्मादेनसः सविता च प्र मुञ्चताम् ॥१४,२.६०॥

यदि यह पुत्री आपके घर में केशों को खोलकर रुदन करती हुई, दुःख को बढ़ाती रहे, तो उससे उत्पन्न पाप दोष से अग्निदेव और सवितादेव आपको संरक्षित करें ॥१४,२.६०॥

यज्जामयो यद्युवतयो गृहे ते समनर्तिषू रोदेन कृण्वतीरघम् ।
अग्निष्ट्वा तस्मादेनसः सविता च प्र मुञ्चताम् ॥१४,२.६१॥

जो बहिनें और स्त्रियाँ आपके घर में कन्या के गमन से दुखित होकर रोती रहें , तो (उनके इस कृत्य से) समुत्पन्न पापदोष से अग्नि और सवितादेव आपको संरक्षित करें ॥१४,२.६१॥

यत्ते प्रजायां पशुषु यद्वा गृहेषु निष्ठितमघकृद्भिरघं कृतम् ।
अग्निष्ट्वा तस्मादेनसः सविता च प्र मुञ्चताम् ॥१४,२.६२॥

पाप- दुःख फैलाने वालों ने जो आपके परिवार, सन्तति, पशुओं और घर में दुःखद वातावरण बना दिया है, उससे लगे पाप से सविता और अग्निदेव आपको मुक्त करें ॥१४,२.६२॥

इयं नार्युप ब्रूते पूल्यान्यावपन्तिका ।
दीर्घायुरस्तु मे पतिर्जीवाति शरदः शतम् ॥१४,२.६३॥

धान्य, खीलों की आहुति समर्पित करती हुई, यह नारी ईश्वर से प्रार्थना करती है कि मेरा पति दीर्घायु बनकर सौ वर्ष तक जीवन यापन करे ॥१४,२.६३॥

इहेमाविन्द्र सं नुद चक्रवाकेव दंपती ।
प्रजयैनौ स्वस्तकौ विश्वमायुर्व्यश्नुताम् ॥१४,२.६४॥

हे देवराज इन्द्र ! इस दम्पती को चक्रवाक (चकवा-चकवी) के जोड़े के समान स्नेहभाव बनाये रखने के लिए प्रेरित करें। ये दोनों श्रेष्ठ गृह और श्रेष्ठ सन्तान से युक्त होकर आजीवन विभिन्न भोगों को प्राप्त करें ॥१४,२.६४॥

यदासन्द्यामुपधाने यद्वोपवासने कृतम् ।
विवाहे कृत्यां यां चक्रुरास्नाने तां नि दध्मसि ॥१४,२.६५॥

बैठक (बैठने की चौकी) पर, बिस्तर (सिरहाना) पर, उपवस्त्र पर तथा विवाह के समय जो कोई पाप या घातक (कृत्या) प्रयोग हुए हों, उन्हें हम स्नान द्वारा (आत्मशुद्धि से) धो डालते हैं ॥१४,२.६५॥

यद्दुष्कृतं यच्छमलं विवाहे वहतौ च यत्।
तत्संभलस्य कम्बले मृज्महे दुरितं वयम् ॥१४,२.६६॥

विवाह संस्कार और बरात के रथ में जो कोई दुष्कृत्य और पापकर्म बन गये हों, उन्हें हम मृदुभाषी के कम्बल (आवरण) में स्थापित करते हैं ॥१४,२.६६॥

संभले मलं सादयित्वा कम्बले दुरितं वयम् ।
अभूम यज्ञियाः शुद्धाः प्र ण आयूंषि तारिषत्॥१४,२.६७॥

हम याज्ञिक जन, मल को संभल से तथा दुरितों को कम्बल से शुद्ध करके दोषरहित (पवित्र) हों । यज्ञदेव हमारी आयु का विस्तार करें ॥१४,२.६७॥

कृत्रिमः कण्टकः शतदन् य एषः ।
अपास्याः केश्यं मलमप शीर्षण्यं लिखात्॥१४,२.६८॥

सैकड़ों दाँत वाला जो कृत्रिम कंघा है, वह इस वधू (प्रकृति) के सिर की मलीनता को दूर करके उसे स्वच्छ बनाए ॥१४,२.६८॥

अङ्गादङ्गाद्वयमस्या अप यक्ष्मं नि दध्मसि ।
तन् मा प्रापत्पृथिवीं मोत देवान् दिवं मा प्रापदुर्वन्तरिक्षम् ।
अपो मा प्रापन् मलमेतदग्ने यमं मा प्रापत्पितॄंश्च सर्वान्
॥१४,२.६९॥

हम इस वधू या प्रकृति के प्रत्येक अंग से रोगों को दूर करते हैं । यह दोष पृथ्वी, अन्तरिक्ष, द्युलोक और देव-शक्तियों को प्राप्त न हो । हे अग्निदेव ! यह मलीनता जल, यम और पितरजनों को भी कष्ट न दे सके ॥१४,२.६९॥

सं त्वा नह्यामि पयसा पृथिव्याः सं त्वा नह्यामि पयसौषधीनाम् ।
सं त्वा नह्यामि प्रजया धनेन सा संनद्धा सनुहि वाजमेमम्
॥१४,२.७०॥

हे वधु (प्रकृति) ! हम आपको पृथ्वी के दूध के समान पोषक तत्त्वों और ओषधियों के पौष्टिकतत्त्व से युक्त करते हैं। आपको श्रेष्ठ सन्तति और वैभव – सम्पदा से युक्त करते हैं। आप इन गुणों से युक्त होकर बलशालिनी हों ॥१४,२.७०॥

अमोऽहमस्मि सा त्वं सामाहमस्म्यृक्त्वं द्यौरहं पृथिवी त्वम् ।
ताविह सं भवाव प्रजामा जनयावहै ॥१४,२.७१॥

हे नारी ! मैं पुरुष प्राणतत्त्व विष्णु हैं, तो आप रयि (लक्ष्मी) हैं, मैं सामगान हैं, तो आप ऋक् (ऋचा) हैं, मैं (पुरुष) द्युलोक (सूर्य शक्ति) हैं, तो आप सहनशीलता की प्रतीक पृथ्वी हैं, हम दोनों पारस्परिक स्नेह से एकत्र होकर श्रेष्ठ सन्तति को जन्म दें ॥१४,२.७१॥

जनियन्ति नावग्रवः पुत्रियन्ति सुदानवः ।
अरिष्टासू सचेवहि बृहते वाजसातये ॥१४,२.७२॥

जैसे अविवाहित हम (दोनों) विवाह की कामना करते हैं, उसी प्रकार दाताजन पुत्र की अभिलाषा रखते हैं। हम जीवित रहने तक अन्न-धन आदि महान् सामर्थ्य की प्राप्ति हेतु एक साथ रहें ॥७२॥

ये पितरो वधूदर्शा इमं वहतुमागमन् ।
ते अस्यै वध्वै संपत्न्यै प्रजावच्छर्म यछन्तु ॥१४,२.७३॥

बरात के आगमन पर नववधू के दर्शनार्थ जो सम्भ्रान्त स्त्री-पुरुष एकत्रित हों, वे सभी सुशीला नववधू को सन्तानवती होने का मंगल आशीर्वाद प्रदान करें ॥१४,२.७३॥

येदं पूर्वागन् रशनायमाना प्रजामस्यै द्रविणं चेह दत्त्वा ।
तां वहन्त्वगतस्यानु पन्थां विराडियं सुप्रजा अत्यजैषीत्॥१४,२.७४॥

जो स्त्री रस्सी के समान अनेक धागों से संयुक्त होकर सर्वप्रथम इसे गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने जा रही है, यहाँ उस वधू को धन और सुसंतति का मंगलमय आशीष देकर उसे पूर्व में अनुभवहीन मार्ग से सुरक्षित लेकर जाएँ । वह वधू तेजस्विनी और श्रेष्ठ प्रजावाली होकर विजयश्री प्राप्त करे ॥१४,२.७४॥

प्र बुध्यस्व सुबुधा बुध्यमाना दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ।
गृहान् गछ गृहपत्नी यथासो दीर्घं त आयुः सविता कृणोतु ॥१४,२.७५॥

हे श्रेष्ठ ज्ञानवती स्त्री ! आप ज्ञानयुक्त रहकर सौ वर्ष का दीर्घजीवन प्राप्त करने के लिए जाग्रत् रहें । आप अपने

पतिगृह जाएँ, वहाँ गृहस्वामिनी बनकर रहें, सर्वप्रेरक सवितादेव आपकी आयु को दीर्घ बनाएँ ॥१४,२.७५॥

॥ इति चतुर्दशं काण्डम्॥